ORIGINAL RESEARCH PAPER

Hindi

KEY WORDS:

भीष्म साहनी के नाटक हानूश मे विविध आयाम

कविता रानी एम. ए. हिन्दी, नेट, सिरसा - 125055 (हरियाणा)

भीष्म साहनी का व्यक्तित्व बहुआयामी है। वे हिन्दी गद्यकारों में अग्रिम पंक्ति के रचनाकार हैं। वे मूलतः कथाकार हैं लेकिन, "स्वाभाविक-यथार्थपूर्ण चरित्रों की जीवंत सृष्टि, क्षणों की सूक्ष्म पकड़, सहज नाटकीय प्रसंगों की अद्भुत समझ, गहन विडंबनापूर्ण स्थितियों की अचूक पहचान, रोचक एवं कुतूहलपूर्ण घटनाक्रम की कुशल योजना और तनावपूर्ण मनः स्थितियों के मनोवैज्ञानिक विश्लेषण की तार्किक शक्ति जैसी नाट्य लेखन के लिए सभी प्रमुख विशेषताएँ भीष्म साहनी के कथा साहित्य में आरंभ से ही विद्यमान थीं।"1 भीष्म साहनी के सृजनात्मक वैविध्य को इस तथ्य के आलोक में और अधिक सटीक तरीके से समझा जा सकता है कि उनके लेखन की प्रमुख विधाओं- कहानी, उपन्यास और नाटक तीनों में उनके तेवर एकदम अलग हैं। कहानी में जहाँ वे सामाजिक-पारिवारिक मूल्यों को तरजीह देते हैं वहीं उनके उपन्यास विभाजन की त्रासदी के दस्तावेज़ हैं। "नाटककार भीष्म साहनी कथा और उपन्यास से एकदम अलग हैं। इस क्षेत्र में वह बिल्कुल नई चेतना और सोच की बात करते हैं।"2

भीष्म साहनी ने कुल छह नाटकों की रचना की। हानूश (1977), कबिरा खड़ा बजार में (1981), माधवी (1984), मुआवज़े (1993), रंग दे बसंती चोला (1996), आलमगीर (1999)। भीष्म साहनी ने अपने एक साक्षात्कार में एक सवाल के जवाब में नाटक संबंधी अपनी रुचि के विषय में कहा है कि, "नाटक की दुनिया बड़ी आकर्षक और निराली है। किस तरह धीरे-धीरे नाटक रूप लेता है और रूप लेने पर कैसे एक नए संसार की सृष्टि हो जाती है। यह अनुभव बहुत ही सुखद और रोमांचकारी होता है। नाटक खेलनेवालों के सिर पर एक तरह का जुनून छाया रहता है, जिसका मुक़ाबला नहीं।"3 नाटक और रंगमंच के प्रति अपने रुझान का उल्लेख भीष्म जी ने अपनी आत्मकथा में कई स्थानों पर किया है। बचपन से ही वे नाटकों में अभिनय करते थे। "मैं चौथी कक्षा में पढ़ता था जब स्कूल में खेले गए एक नाटक में पहली अदाकारी की। नाटक का नाम 'श्रवण कुमार' था और मैं श्रवण कुमार की भूमिका ही निभा रहा था।"4 "...रंगमंच के मायावी आकर्षण से बिंधे भीष्म साहनी एक अभिनेता, निर्देशक, व्यवस्थापक, अनुवादक, रूपांतरकार, दर्शक और थिएटर एक्टिविस्ट के नाते रंगमंच से कमोबेश हमेशा ही जुड़े रहे। इसके बावजूद यह भी सच है कि 1976 में अपना पहला मौलिक नाटक हानूश लिखने से पहले तक उनके रचनात्मक लेखन का केंद्र कहानी-उपन्यास ही रहा और उस क्षेत्र में उन्होने खूब ख्याति, प्रतिष्ठा और लोकप्रियता भी अर्जित की। परंतु जब नाट्य-लेखन के क्षेत्र में सक्रिय हुए तो हानूश को लेकर बड़े भाई की प्रतिक्रिया और सुप्रसिद्ध नाट्य- निर्देशक इब्राहिम अलकाजी की उपेक्षा भी उन्हें हतोत्साहित नहीं कर सकी"5 बलराज साहनी की उपेक्षा को बयान करते हुए भीष्म जी ने लिखा है कि, "हानूश नाटक पर मैं लंबे अरसे से काम कर रहा था। पहली बार जब नाटक की पांडुलिपि तैयार हुई तो उसे लेकर मुंबई पहुँचा, बलराजजी को दिखाने के लिए। उन्होंने पढ़ा और ढेरों ठंडा पानी मेरे सिर पर उँडेल दिया। 'नाटक लिखना तुम्हारे बस का नहीं है।' उन्होंने ये शब्द कहे तो नहीं, पर उनका अभिप्राय यही था। उनके चेहरे पर हमदर्दी का भाव यही कह रहा था।"6 इब्राहिम अलकाजी ने भी इसकी पांडुलिपि दो महीने तक अपने पास रखी और फिर बिना पढ़े ही लौटा दी।7 हानूश पहले मंचित हुआ बाद में प्रकाशित हुआ। 1977 में राजेन्द्रनाथ के निर्देशन में दिल्ली में इसका मंचन हुआ।

हानूश का रचनाकाल भारतीय राजनीति का विवादास्पद काल था। कल्पना साहनी ने लिखा है कि, "हानूश का मंचन 1977 में हुआ था, जब इन्दिरा गांधी की प्रैस सेंसरशिप के हालातों में, यह नाटक एकदम मौजूं था।"7 हालांकि खुद भीष्म जी आपातकाल और इस नाटक के विषय के साम्य को स्वीकार नहीं करते। उन्होंने 'आज के अतीत' में लिखा है कि, "नाटक अभी खेला ही जा रहा था जब मुझे एक दिन प्रातः अमृता प्रीतम का टेलीफ़ोन आया। मुझे नाटक पर मुबारकबाद देते हुए बोलीं :

"तुमने एमर्जेंसी पर खूब चोट की है। मुबारक हो!"

अमृता जी की तरफ से मुबारक मिले, इससे तो गहरा संतोष हुआ पर उनका यह कहना कि एमर्जेंसी पर मैंने चोट की है, सुनकर मैं जरूर चौंका। उन्हें एमर्जेंसी की क्या सूझी? एमर्जेंसी तो मेरे ख्वाब-ख्याल में भी नहीं थी। मैं तो बरसों से अपनी ही एमर्जेंसी से जूझता रहा था। बेशक ज़माना एमर्जेंसी का ही था जब नाटक ने अंतिम रूप लिया। पर हाँ, इसमें संदेह नहीं कि निरंकुश सत्ताधारियों के रहते, हर युग में, हर समाज में, हानूश जैसे फनकारों-कलाकारों के लिए एमर्जेंसी ही बनी रहती है और वे अपनी निष्ठा और आस्था के लिए यातनाएं भोगते रहते हैं। यही उनकी नियति है।"7 स्पष्ट है कि 1975-76 की राजनीतिक गतिविधियों ने भीष्म जी को भीतर तक झकझोर डाला होगा तभी हानूश की रचना संभव हो सकी होगी। अन्यथा प्राग की जिस किंवदंती को इस नाटक का आधार बनाया गया है उसे तो भीष्म जी ने सोलह-सत्रह वर्ष पहले सुना था। कलाकार के अस्तित्व की रक्षा की चुनौती उनके सामने खड़ी रही होगी। "कोई भी कलाकार अपने समय के जीवंत प्रश्नों की उपेक्षा नहीं कर सकता। हानूश ने समय की चुनौती स्वीकार की और उसने समय को काँटों में कैद कर लिया। भीष्म साहनी ने समय की चुनौती स्वीकार की तो कलाकार की अस्मिता और उसके अस्तित्व पर एक जीवंत प्रश्नचिह्न अंकित कर दिया।"8

हानूश उनका पहला नाटक है। इस पर बाद में विस्तार से विचार किया जाएगा। लेकिन पहले थोड़ी चर्चा उनके अन्य नाटकों पर करते हैं। 'कबिरा खड़ा बजार में' (1981) में उन्होंने महान संत कबीर के जीवन के आधार पर मध्यकालीन भारत के समाज में विद्यमान विद्रूपता को अभिव्यक्त किया है। नाटक कबीर के काल, तत्कालीन समाज की धर्मांधता तथा तानाशाही और कबीर के बाह्याचार- विरोधी पक्ष पर प्रकाश डालता है। उनके तीसरे नाटक 'माधवी' (1984) में महाभारत की कथा के एक अंश को आधार बनाया गया है। यह ययाति की पुत्री माधवी के जीवन की कथा है। इसमें दिखाया गया है कि वरदान कैसे अभिशाप बन सकता है। माधवी को वरदान मिला है कि उसका पुत्र चक्रवर्ती होगा और साथ ही यह भी कि विवाह और पुत्र होने के बाद वह पुनः कौमार्य धारण कर लेगी। अलग-अलग रनिवासों में रहकर माधवी ने कई पुत्रों को जन्म दिया और वह कई बार अपने यौवन को समर्पित करती है। उसके पिता ययाति दानवीर कहलाए। लेकिन माधवी को क्या मिला, स्पष्ट है कि माधवी की कथा के माध्यम से भीष्म साहनी ने स्त्री शोषण को स्वर दिया है।

उनका चौथा नाटक 'मुआवजे' (1993) उनके पहले तीनों नाटकों के विषय के

धरातल पर एकदम भिन्न है। इस नाटक में भीष्म जी ने सांप्रदायिक दंगों की पृष्ठभूमि को आधार बनाया है। दंगों के पीछे के सच को उघाड़कर रख दिया है। इस नाटक की भूमिका में वे लिखते हैं, "यह प्रहसन हमारी आज की विडंबनापूर्ण सामाजिक स्थिति पर किया गया व्यंग्य है। नगर में सांप्रदायिक दंगे के भड़क उठने का डर है। इक्का-दुक्का छोटी-मोटी घटनाएँ घट भी चुकी हैं। इस तनावपूर्ण स्थिति का सामना किस प्रकार किया जाता है; हमारा प्रशासन, हमारे नागरिक, हमारा धनी वर्ग, हमारे सियासतदाँ किस तरह इसका सामना करते हैं, इसी विषय को लेकर नाटक का ताना-बाना बुना गया है।"9

अपने पाँचवे नाटक 'रंग दे बसंती चोला' में भीष्म जी ने जलियाँवाला बाग की घटना को आधार बनाकर उसके पात्रों के माध्यम से त्याग और देशभक्ति की अनुपम मिसाल स्थापित की है। उसकी प्रमुख पात्र रतनदेवी का पति हेमराज जब जलियाँवाला बाग में शहीद हो जाता है तो वह उसके खून से लथपथ शरीर को देखकर रोती नहीं बल्कि उसे खुशी- खुशी विदा करने की बात करती है।

उनका अंतिम नाटक आलमगीर (1999) में प्रकाशित हुआ। यह मुगल सम्राट औरंगजेब के जीवन पर आधारित है। इसमें मध्यकालीन भारत के तत्कालीन यथार्थ की अभिव्यक्ति हुई है।

हानूश लिखने की प्रेरणा के बारे में भीष्म साहनी ने एक स्थल पर बताया है कि, "हानूश नाटक की प्रेरणा मुझे चेकोस्लोवाकिया की राजधानी प्राग से मिली थी। यूरोप की यात्रा करते हुए एक बार मैं और शीला प्राग पहुँचे। उन दिनों निर्मल वर्मा वहाँ पर थे। होटल में सामान रखने के फ़ौरन बाद मैं उनकी खोज में निकल पड़ा। उस हॉस्टल में जा पहुँचा जिसका पता मेरे पास पहले से था। कमरा तो मैंने ढूँढ निकाला, पर पता चला निर्मल वहाँ पर नहीं हैं। संभवतः वह इटली की यात्रा पर गए हुए थे। बड़ी निराशा हुई। पर अचानक ही, दूसरे दिन वह पहुँच भी गए, और फिर उनके साथ सभी विरल स्मारकों, गिरजों, स्थलों को देखने का सुअवसर मिला, विशेषकर 'गाथिक' और 'बरोक' गिरजों को जिनकी निर्मल को गहरी जानकारी थी।

और इसी घुमक्कड़ी में हमने हानूश की घड़ी देखी। यह मीनारी घड़ी प्राग की नगरपालिका पर सैकड़ों वर्ष पहले लगाई गई थी, चेकोस्लोवाकिया में बनाई जाने वाली पहली घड़ी मानी जाती थी और उसके साथ एक दंतकथा जुड़ी थी कि इसे बनाने वाला एक साधारण कुफ़लसाज़ था, कि उसे घड़ी बनाने में सत्रह साल लग गए और जब वह बनकर तैयार हुई तो राजा ने उसे अंधा करवा दिया ताकि वह ऐसी कोई दूसरी घड़ी न बना सके। घड़ी को दिखाते हुए निर्मल ने उससे जुड़ी यह कथा भी सुनाई। सुनते ही मुझे लगा कि इस कथा में बड़े नाटकीय तत्त्व हैं, कि यह नाटक का रूप ले सकती है।"10 हानूश की भूमिका में भीष्म साहनी ने लिखा है कि, " बात मेरे मन में अटकी रह गई और समय बीत जाने पर भी यदा-कदा मन को विचलित करती रही। आखिर मैंने इसे नाटक का रूप दिया जो आज आपके हाथ में है।"11 हानूश में लगभग बीस वर्ष के कथानक को तीन अंकों में समेटा गया है। घटना समय लगभग पाँच सौ साल पुराना है। चेकोस्लोवाकिया के प्राग शहर में हानूश नाम का एक ताले बनाने वाला था। परिवार में पत्नी कात्या और एक बेटी थी। हानूश का भाई पादरी था। बाद में जेकब नाम के एक आश्रयहीन युवा को भी घर में आश्रय दिया, वह ताले बनाने में हानूश की मदद करता था। कात्या उन तालों को बाज़ार में बेचने जाती और किसी तरह घर का निर्वाह होता। हानूश ने जब कई लोगों से किसी घड़ी की चर्चा सुनी तो उसके मन में भी घड़ी बनाने का ख्याल पनपा। उसने नगर के एक गणित शिक्षक से घड़ी बनाने के लिए आवश्यक गणित सीखा। लुहार से आवश्यक औज़ार बनवाए। अब उसे काम शुरू करने के लिए धन की आवश्यकता थी। धन जुटाने में उसके पादरी भाई ने चर्च से अनुदान दिला दिया। इस प्रकार घड़ी बनने का कार्य शुरू हुआ। क्योंकि अब हानूश घड़ी बनाने में व्यस्त था इसलिए ताले बनाने का काम ठप्प पड़ गया और घर पर विपन्नता हावी हो गई। चर्च से मिले अनुदान से पूरा नहीं पड़ता था। जेकब की मदद से ताले बनाने का काम पुनः शुरू हुआ और इससे परिवार को थोड़ी राहत मिली। जेकब के आ जाने से हानूश को भी थोड़ी सहायता मिली। वह उसे समय मिलने पर घड़ी का तंत्र समझाता। पिछले पंद्रह-सोलह साल से घड़ी बनाने के काम में लगे, लगभग पस्त हो चुके हानूश को जेकब के आ जाने से हिम्मत मिली और वह नए जोश के साथ पुनः अपने काम में जुट गया। सत्रह साल के लंबे अंतराल के बाद जब घड़ी बनने ही वाली थी तब फिर से धन की कमी आड़े आ गई। कुछ शुभचिंतकों की मदद से व्यवसायियों ने इस शर्त पर आर्थिक सहायता दी कि घड़ी के बन जाने पर उनके इच्छित स्थान पर घड़ी की स्थापना की जाएगी। हानूश अब अपनी योजना को सफल होते देख रहा था। पिछले सत्रह सालों में न जाने कितनी बार उसने इस निश्चय को निराश होकर छोड़- सा दिया था। उसमें इस आर्थिक सहायता से फिर से आशा का संचार हुआ और वह घड़ी को पूर्ण करने के लिए जी-जान से जुट गया। एक दिन तमाम अवरोधों से उबरकर हानूश घड़ी बनाने में सफल हुआ। उसका वर्षों का स्वप्न साकार हुआ। अपनी इस सफलता के लिए वह अपने पादरी भाई (जिसने उसे आरंभिक आर्थिक सहायता दिलाई), अपने परिवार (जिसने उसे घोर अभावों में भी इस महान कलाकृति को गढ़ने का अवसर दिया) के प्रति कृतज्ञ था। साथ-ही-साथ वह उन व्यापारियों का भी आभारी था जिन्होंने अंतिम समय में आर्थिक सहायता देकर उसके सपने को पूर्ण किया। लेकिन व्यापारियों की सहायता निःस्वार्थ नहीं थी। वे घड़ी का महत्त्व समझते थे। वे बादशाह पर अपना प्रभाव पुनः स्थापित करना चाहते थे। बादशाह चर्च से अधिक प्रभावित था। साथ ही, व्यापारी बाज़ार की रौनक पुनः लौटाना चाहते थे। इसलिए व्यापारियों ने घड़ी को शहर के एक व्यस्त चौराहे की मीनार पर लगाने का निश्चय किया और बादशाह से घड़ी का उद्घाटन करवाने की योजना बनाई। इस प्रकार वे एक तीर से कई लक्ष्य बेधना चाहते थे। एक, घड़ी चर्च में नहीं लगी इसलिए चर्च का प्रभाव कम हुआ। दो, घड़ी को देखने के लिए दूर-दूर से लोग आएँगे इससे बाज़ार की रौनक लौटेगी। तीन, बादशाह हानूश से प्रसन्न होकर उसे पुरस्कृत करेंगे और उसकी सलाह पर दरबार में व्यापारियों को पद-प्रतिष्ठा मिलेगी। सब कुछ व्यापारियों की योजनानुसार ही होता है। हाँ, केवल हानूश संबंधी उनका अनुमान सही नहीं बैठता। बादशाह ने घड़ी का उद्घाटन किया। देश-विदेश एवं शहर की समस्त जनता उस घड़ी को देखने के लिए उमड़ पड़ी। हर तरफ हानूश की चर्चा थी। बादशाह ने हानूश को सम्मानित करने की घोषणा की। उसे दरबारी का सम्मानित पद और पुरस्कार के रूप में वृत्ति प्रदान की गई। हानूश इस प्रतिष्ठा से मन-ही-मन गदगद हो उठा। लेकिन साथ ही बादशाह ने हानूश की आँखे निकालने का हुक्म भी दिया। उसके आदेश पर हानूश की आँखे निकाल ली गई। उसके जीवन में अंधेरा छा गया। अंधेपन के कारण वह विक्षिप्त-सा हो गया। वह अपने अंधेपन का कारण उस घड़ी को मानता और प्रतिशोध की आग में उसे नष्ट करने की बात सोचता। जेकब घड़ी का भेद अपने भीतर छुपाए प्राग से चुपचाप भाग गया। घोर निराशा के क्षणों में हानूश ने अपने आप को ख़त्म करने के बारे में भी सोचा। घड़ी के खराब हो जाने पर हानूश को उसे ठीक करने के लिए जाना पड़ा। उसके सामने उसे नष्ट करने का अवसर था, लेकिन लेखक ने यहाँ पर यह स्पष्ट किया है कि कोई भी कलाकार कितनी ही विकट परिस्थिति में क्यों न हो वह अपनी कलाकृति को नष्ट नहीं कर सकता। घड़ी के पास पहुँचकर हानूश के हृदय में उसके प्रति वात्सल्य का भाव जागृत हो उठता है। इसलिए हानूश भी घड़ी को ठीक करके वापस लौट आया। मानसिक अंतर्द्वंद्व से उबरकर वह एक महान चरित्र के रूप में हमारे सामने आता है। एक महान कलाकार का चरित्र, जो अपनी कला से बेपनाह प्यार करता है और उसको सुरक्षित बनाए रखने के लिए बड़ी-से-बड़ी कुर्बानी दे सकता है। अपने एक साक्षात्कार में भीष्म जी हानूश के विषय में कहते हैं, "हानूश लिखते

समय महसूस हुआ कि कहानी में कोई पात्र धुँधला रह सकता है, लेकिन नाटक में नहीं रह सकता। उसमें प्रत्येक पात्र का अपना स्पष्ट व्यक्तित्व होना जरूरी है। दूसरे कथानक भले ही काल्पनिक हो, उसका क्रमिक विकास स्वाभाविक और विश्वसनीय होना जरूरी है।"12

'मैं अपनी नज़र में' शीर्षक आत्मकथ्य में अपने कला विषयक दृष्टिकोण को स्पष्ट करते हुए भीष्म साहनी का कहना है, "कला के क्षेत्र में भी उसे (भीष्म जी को) वे कृत्तियाँ अभिभूत कर लेती हैं, जहाँ कलाकार मानवीय सीमाओं को लाँघ जाता है, जहाँ उसकी कला मानवीय स्तर से उठकर किसी दैवी स्तर को छूने लगती है, जब उसका संवेदन मानवेतर स्तर पर किसी भाव को शब्दों अथवा रंगों में बांध लेता है, जहाँ इसे (भीष्म जी को) जैसे बिजली छू जाती है और यह मंत्रमुग्ध-सा खड़ा-का-खड़ा रह जाता है। शायद कलाकार का संघर्ष मानवीय सीमाओं को लाँघना ही है।"13 हानूश उन तमाम मानवीय सीमाओं को लाँघकर ही महान कलाकार बन सकता था। भीष्म साहनी ने उसके चरित्र को कुछ इस तरह से गढ़ा है कि हानूश की कला आत्मनिष्ठ न रहकर वस्तुनिष्ठ यथार्थ में परिणत हो जाती है। भीष्म साहनी ने 'संघर्ष, परिवर्तन और लेखकीय मानसिकता' लेख में कला और कलाकार के संबंध पर विचार करते हुए लिखा है, "कला सचमुच वह प्रक्रिया है जिसमें लिखने वाले के निजी उद्वेग, मूर्तरूप लेते हुए, धीरे-धीरे आत्मनिष्ठ न रहकर, वस्तुनिष्ठ होते चले जाते हैं।"14

अंग्रेज़ी के महान नाटककार विलियम शेक्सपीयर ने अपने प्रसिद्ध नाटक "हैमलेट" में नाटक का उद्देश्य स्पष्ट करते हुए कहा है, "इस बात का विशेष ध्यान रहे कि प्रकृति की सीमा का उल्लंघन कहीं पर भी न हो। क्योंकि किसी प्रकार की अति नाटक के उद्देश्य से दूर हो जाना है, जिसका लक्ष्य पहले भी यही था और अब भी यही है – उसके दर्पण में प्रकृति को प्रतिबिंबित करना – युग को उसका स्वरूप दिखाना, और अवगुण को उसका खाका, और युग और काल को उसका नक्शा और उसका प्रभाव। उसकी अतिव्याप्ति अथवा अपर्याप्ति पर गँवार भले ही हँसे, पर समझदार आँसू बहाता है।"15 यानी अपने युग की स्वाभाविक अभिव्यक्ति शेक्सपीयर की दृष्टि में नाटक का प्रमुख उद्देश्य है और हानूश इस कसौटी पर एकदम खरा उतरता है। "अपनी कला के बल पर सत्ता को चुनौती देते एक मामूली कुफ़लसाज़ हानूश का आत्मसम्मान, आत्मविश्वास, निर्भीक योद्धा और भविष्यवेत्ता जैसा तेवर सचमुच अविस्मरणीय है। अपने शिष्य जेकब को भगाने और खुद बादशाह सलामत के ख़िलाफवर्जी करने के जुर्म में स्वयं को आश्वस्त भाव से समर्पित करते हुए हानूश कहता है कि -"महाराज का हुक्म सिर-आँखों पर। मैं हाज़िर हूँ। घड़ी बन सकती है, घड़ी बंद भी हो सकती है। घड़ी बनाने वाला अंधा भी हो सकता है। लेकिन यह बात बड़ी नहीं है। जेकब चला गया ताकि घड़ी का भेद ज़िंदा रह सके, और यही सबसे बड़ी बात है।"16 हानूश को अपनी चिंता नहीं है, बल्कि अपनी कला को बचाए रखने की चिंता है। उसके लिए उसकी कृति उसके जीवन से भी अधिक मूल्यवान है।

भीष्म साहनी का इस नाटक के विषय में स्वयं का मत है कि, "यह नाटक ऐतिहासिक नहीं है, न ही इसका अभिप्राय घड़ियों के आविष्कार की कहानी कहना है। कथानक के एक-दो तथ्यों को छोड़कर, लगभग सभी कुछ ही काल्पनिक है। नाटक एक मानवीय स्थिति को मध्ययुगीन परिप्रेक्ष्य में दिखाने का प्रयास है।"17 ज्योतिष जोशी के अनुसार, "इस नाटक के बहाने भीष्म साहनी ने एक मानवीय मूल्यजनित कथा को मध्ययुगीन संदर्भ में दिखाया है और बताया है कि दुनिया जिस चीज़ पर रीझती है उसके निर्माता किस-किस कारुणिक त्रासदी के शिकार होते रहे हैं। अपने यथार्थवादी ढांचे में यह नाटक हानूश जैसे चरित्र की सृष्टि के कारण महत्त्वपूर्ण है, जिसमें जय-पराजय, आशा-निराशा और क्रूर नियति के प्रति गहरा आक्रोश है।"18

प्रसिद्ध नाट्यकर्मी देवेंद्र राज अंकुर के अनुसार, "इन नाटकों का ताना-बाना भीष्म जी ने लोककथा, इतिहास और समसामयिक यथार्थ से सामग्री लेकर बुना लेकिन हानूश उनका पहला नाटक ही नहीं 'आषाढ़ का एक दिन' के बाद हिंदी रंगमंच का सबसे महत्त्वपूर्ण नाटक है।"19

निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि भीष्म साहनी के पास जीवन को देखने की व्यापक दृष्टि है। मानवीयता उनके नाटकों की आधारभूमि है। व्यक्ति एवं समाज के जटिल संबंधों को सहजता से जीवंत बना देना उनकी विशेषता है। कला और सत्ता के विरोधाभासी चरित्रों की जितनी सशक्त अभिव्यक्ति उनके नाटकों (विशेष रूप से हानूश) में हुई है वैसी अन्यत्र दुर्लभ है। विषय चाहे ऐतिहासिक हो या काल्पनिक वे समकालीन समस्याओं एवं विसंगतियों को गहरी सूझबूझ के साथ प्रदर्शित करते हैं। नाटककार के रूप में हिंदी साहित्य में उनका योगदान अविस्मरणीय है।

संदर्भ

1. आधुनिक भारतीय नाट्य- विमर्श -जयदेव तनेजा पृष्ठ-111
2. रंग विमर्श -ज्योतिष जोशी पृष्ठ 116
3. भीष्म साहनी: व्यक्ति और रचना -राजेश्वर सक्सेना एवं प्रताप ठाकुर पृष्ठ 16
4. आज के अतीत -भीष्म साहनी पृष्ठ 44
5. आधुनिक भारतीय नाट्य- विमर्श - जयदेव तनेजा पृष्ठ-113
6. आज के अतीत -भीष्म साहनी पृष्ठ 232-233
7. वही, पृष्ठ 234
8. संपूर्ण नाटक - भीष्म साहनी, भाग-1 पृष्ठ 8
9. वही, पृष्ठ 330
10. आज के अतीत -भीष्म साहनी , पृष्ठ 208
11. संपूर्ण नाटक -भीष्म साहनी पृष्ठ- 32
12. भीष्म साहनी: व्यक्ति और रचना- राजेश्वर सक्सेना एवं प्रताप ठाकुर, पृष्ठ 15
13. अपनी बात-भीष्म साहनी पृष्ठ 29-30
14. वही, पृष्ठ 78
15. बच्चन रचनावली-भाग 5, पृष्ठ 313
16. आधुनिक भारतीय नाट्य- विमर्श -जयदेव तनूजा पृष्ठ- 114-115
17. संपूर्ण नाटक-भीष्म साहनी पृष्ठ- 32
18. रंग विमर्श-ज्योतिष जोशी, पृष्ठ 116
19. पढ़ते सुनते देखते-देवेन्द्र राज अंकुर, पृष्ठ 75